ॐ

श्री सद्गुरु महर्षि मलयालस्वामी आश्रम्,
प्लॉट नं. 48, कलावतीनगर,
न्यू सुनिलनगर, एम.आय.डी.सी.
<u>सोलापूर</u>, महाराष्ट्र.

Computerized by : Shri Brahmavidyananda giri &
Shri Advaitaananda puri

मूल्य:–रू.850=00 मुद्रित प्रतियाँ: 1000

आविष्करण:–श्रीविश्वावसु नाम संवत्सर आषाढ शुक्ल एकादशी. Date.06-07-2025

Cantact: 7843036503; 8624983944; 7385210230; 7017550722.

॥ अथ प्रत्यक्तत्त्वविवेकः ॥

॥ प्रथमप्रकरणम् ॥ १ ॥

॥ भाषाकर्तृकृतमंगलाचरणम् ॥

गौरी घस्रेश हेरम्ब हरि शङ्करसंज्ञकान् ।
पञ्चदेवानहं वन्दे चित्तैकाग्र्योपकारकान् ॥ १ ॥

॥ अथ प्रत्यक्त[1]त्त्वविवेककी तत्त्वप्रकाशिकाव्याख्या ॥१ ॥

प्रथम भाषाकर्त्ता अपने इष्टदेव औ गुरुनका संस्कृत श्लोकनसें नमस्काररूप मंगल करै है:–

टीका:–अपनीउपासनाद्वारा वेदांतश्रवणमें उपयोगी चित्तकीएकाग्रताकेदेनेरूप उपकार के करनेहारे मायाविशिष्ट ब्रह्मरूप सर्वकी उपादानकारण देवी[2]सूर्य गणपति विष्णु अरु शिव इन नामवाले पंचदेवनकू मैं वंदन करूं हूं ॥ १ ॥

वेदान्तार्थप्रकाशेन जगदान्ध्यनिवारकान् ।
सर्वाचार्याग्रगण्यांस्तान् वन्दे शङ्करदैशिकान् ॥२ ॥

---

[1] यद्यपि प्रत्यक्तत्त्वविवेक नाम ब्रह्माभिन्नप्रत्यगात्माका उपाधितैं विवेचन(भेदज्ञान)का है। तिस (विवेक)कूं अंतःकरणकी वृत्तिरूप होनेतैं सो इस प्रकरणका नाम संभवै नहीं। तथापि जन्य (विवेक) जनक (ग्रंथ) के अभेदके अभिप्रायसें इस प्रकरणका बी प्रत्यक्-तत्त्व-विवेक नाम है। ऐसैं और चारिविवेक नाम प्रकरणमैं बी जानी लेना॥ और पांच आनंद नाम प्रकरणमैं वाच्यवाचकके अभेदअभिप्रायसैं आनंद नाम है ॥इति ॥

[2] **आदित्यं गणनाथं च देवीं रुद्रं च केशवम् । पञ्चदैवतमित्युक्तं सर्व कार्येशु पूजयेत् ॥**
मूलश्लोकमें गौरीपदका प्रथमनिवेश किया है सो प्रथमअक्षर औ गणकी श्रेष्टताअर्थ है॥ जो परम प्रकृति सो कारणब्रह्मरुप है यातैं गणेशादिककी जननी है तातैं ताका प्रथम उच्चारण है।

टीका:–वेदनके अंतभागरूप जे उपनिषद् औ तिनके अनुसारी ब्रह्मसूत्र अरु गीता आदिक वेदांत कहिये है। तिनके ब्रह्मात्माकी एकताप्रधान अर्थके पोडश-भाष्यादिद्वारा[3] प्रसिद्ध करनेकरि सर्वजीवनके अविद्यारूप अंधपनेके निवारण करनेहारे औ याहीतैं सर्व आचार्यनके अग्रमें गिनती करनेके योग्य ऐसैं जे हमारे परमगुरु[4] श्रीशंकराचार्य[5] हैं। तिनकूं मैं वंदन करूं हूं॥ २॥

येनास्तमितमज्ञानामज्ञानं ज्ञानभानुना।
तस्मै मे रामसंज्ञाय परसद्गुरवे नमः॥ ३॥

टीका:–जिसकरि साक्षात् औ शिष्य प्रशिष्यद्वारा ज्ञानरूपसूर्यसें मंदबुद्धिवाले अगणित पुरूषनका मूलाज्ञान नाशकूं प्राप्त भयाहै। तिस रामसंज्ञक परसद्गुरुके[6] तांई मेरा वारंवार नमस्कार होहु॥ ३॥

अहमेव परं ब्रह्म मयि सर्वं प्रकल्पितम्।
ज्ञातं यत्कृपया तस्मै बापवे गुरवे नमः॥ ४॥

टीका :–“मैंहीं अखंडसच्चिदानंदपरब्रह्म हूं औ ब्रह्मभूत मेरेविषै सर्वकार्यकारणरूप प्रपंच नित्यनिवृत्त है" इसरीतिसैं जिसके अनुग्रहसें जान्या है। तिस ब्रह्मविद्याप्रद श्रीबापु महाराज संज्ञक साक्षात्सद्गुरुके तांई मेरा नमस्कार[7] होहु॥ ४॥

परवाक्यरसाभिज्ञान् सज्जनान् ब्रह्मवित्तमान्।
निंदासूयादिरहितान् प्रणमामि महत्तमान्॥ ५॥

टीका :–अन्य कवि पुरुषनके वाक्यके रसकूं जाननेहारे औ संशयादिरहित ब्रह्मनिष्ठ

---

[3] **श्लो॥ईशकेनकठप्रश्नमुण्डकमाण्डूक्यतित्तिरः। ऐतरेयं च छान्दोग्यं बृहदारण्यकं तथा॥**(मुक्तिको.१-३०)
ईश।केन।कठ।प्रश्न।मुंड।मांडूक्य।तैत्तिरीय।ऐतरेय।छांदोग्य। बृहदारण्यक इन दशउपनिषदनके भाष्य औ केनउपनिषदका दूसरा(वाक्य) भाष्य। ब्रह्मसूत्रभाष्य। गीताभाष्य सनत्सुजात (महाभारतगत-उद्योगपर्व)भाष्य।विष्णुसहस्रनामभाष्य।नृसिंहतापिनीयउपनिषदभाष्य।इनसैंआदिलेके और उपदेशसहस्री आदिकग्रंथरूप द्वारकरि॥

[4] परमगुरु कहिये परंपराके गुरु॥

[5] शंकरदैशिकपदका जो बहुवचन* है सो तिनकी परमगुरुताका सूचक है। औ और नारायणसैं आदिलेके गोविंदपादपर्यंत औ दक्षिणामूर्ति दत्तात्रेयादिगुरुनका उपलक्षण है॥

***श्लो॥नैकवचनं प्रयुञ्जीत गुरावात्मनि चेश्वरे। उत्तमानां स्वरूपं तु ‘पाद’ शब्देन पठ्यते॥**(अभियुक्तोक्तिः)

[6] परगुरु कहिये गुरुके गुरु॥

[7] अपनी निकृष्टता औ इष्टकी उत्कृष्टता करनेका नाम नमस्कार है।

औ परके दोषकथनरूप निंदा अरु परके गुणनमें दोषके आरोपरूप असूया इत्यादि[8] दुर्गुणतैं रहित ऐसैं अत्यंत-महान्[9]जे संतजन[10] हैं। तिनकूं मैं अतिशयकरि[11] नमन करूं हूं॥ ५॥

श्रीमत्सर्वगुरुन्नत्वा पञ्चदश्या नृभाषया।
प्रत्यक्तत्त्वविवेकस्य कुर्वे व्याख्यां यथामति॥६॥

टीका:–श्रीयुक्त[12]-सर्व[13]-गुरुनकूं नमनकरिके मैं पंचदशीके प्रत्यक्तत्त्वविवेक नाम प्रकरणकी नरभाषासैं जैसी मेरी मति है तैसी टीका करूं हूं॥ ६॥

॥ श्रीपंचदशी ॥

॥ अथ प्रत्यक्तत्त्वविवेकः ॥ १ ॥

॥ प्रथमप्रकरणम् ॥ १ ॥

॥ संस्कृतटीकाकारकृत मंगलाचरणम् ॥

प्रथम टीकाकार श्रीरामकृष्णपंडित ग्रंथकर्त्ताका नमस्काररूप मंगल करते हुये इस प्रकरणकी टीका करनेकी प्रतिज्ञा करै हैं :–

नत्वा श्रीभारतीतीर्थविद्यारण्यमुनीश्वरौ।
प्रत्यक्तत्त्वविवेकस्य क्रियते पददीपिका॥ १॥

---

[8] आदिशब्दकरि परसुखका असहन (स्पर्धा) औ परकी उत्कृष्टताका असहन (मत्सर) सोई ईर्षा औ परछिद्रनकी प्रकटता (पिशुनता) औ लोकरंजनका अनुष्ठान (दंभ) औ देहाभिमानिता (मूर्खत्व) इत्यादि दुर्गुणके निषेधका ग्रहण है। और दुर्गुणरहितताके संबंधि और सद्गुणनका अर्थसैं ग्रहणहै।सो सद्गुण गीताके त्रयोदशअध्यायमें“अमानित्व"से आदिलेके “तत्त्वज्ञानार्थदर्शनम्" पर्यंत विंशति औ पोडशअध्याय में "अभय” से आदिलेके “नातिमानिता” पर्यंत षड्विंशतिदैवीसंपत्तिरूप वर्णन किये हैं औ श्रीमद्भागवतके एकादशस्कंधके एकादशअध्याय में २९ सैं ३४ श्लोक पर्यंत। परमकृपालुता। अद्रोहता। क्षमावानता। औ सत्यभाषण। इनसैं आदिलेके त्रिंशति सत्पुरुषनके लक्षणकरिके वर्णन किये हैं। जिसकूं इच्छा होवै सो तहां देखे।

[9] श्रीमद्भागवतके पंचमस्कंधमैं महतका यह लक्षण है:–जो समचित्त है। प्रशांत हैं। क्रोधरहित हैं। सुहृद् (प्रतिउपकारविना उपकारक) हैं। साधु(सदाचारवान्) हैं। सो महान् हैं।

[10] यह जो बहुवचन है सो ब्रह्मनिष्ठसर्वसंतनका सूचक है।

[11] "ऐसैं संतनकूं अतिशय नमन करूं हूं" यह कहनेतैं सामान्यतैं परमात्मदृष्टिकरि सर्वकूं अपना आप जानी नमन करूं हूं॥

[12] पर (ब्रह्म)विद्या अथवा अपर (शास्त्र वा सगुणब्रह्म) विद्या तिसवाले॥ [है।

[13] सर्वशब्दकरि दोनूं ग्रंथकर्त्ता। औ मातापिता। विद्याप्रद आदिक उपदेशकर्ता उक्तअनुक्त गुरुनका ग्रहण

ॐ

॥ अथ पंचमहाभूतविवेकः॥

॥ द्वितीयप्रकरणम् ॥ २ ॥

॥ भाषाकर्तुकृतमङ्गलाचरणम् ॥

श्रीमत्सर्वगुरुन् नत्वा पञ्चदश्या नृभाषया।

पञ्चभूतविवेकस्य विवृतिः क्रियते मया ॥१ ॥

॥ अथ पञ्चमहाभूतविवेककी तत्त्वप्रकाशिकाव्याख्या ॥

टीका:–श्रीयुक्तसर्वगुरुनकूं नमनकरिके पंचदशीके पंचमहाभूतविवेकनामप्रकरणकी विवृति कहिये व्याख्या नरभाषासैं मेरेकरि करिये है ॥१ ॥

॥ संस्कृतटीकाकारकृत मङ्गलाचरणम् ॥

नत्वा श्रीभारतीतीर्थविद्यारण्यमुनीश्वरौ।

पञ्चभूतविवेकस्य व्याख्यानं क्रियते मया ॥१ ॥

टीका:–श्रीभारतीतीर्थ औ विद्यारण्यनामक दोमुनीश्वरनकूं नमस्कारकरिके [1]पंचभूत विवेक नामक पंचदशीके द्वितीयप्रकरणकी व्याख्या मैं (रामकृष्णपंडित) करुं हूं ॥१ ॥

८७) "सदेव सौम्येदमग्रआसीदेकमेवाद्वितीयमिति"(छां ६-२-१) **श्रुत्या जगदुत्पत्तेः पुरा यत् जगत्कारणं सद्रूपमद्वितीयं ब्रह्म श्रुतं तस्यावाङ्मनसगोचरत्वेन स्वतोऽवगंतुं अशक्यत्वात् तत्कार्यत्वेन तदुपाधिभूतस्य भूतपञ्चकस्य विवेकद्वारा तदवबोधनायोपोद्घातत्वेन भूतपञ्चक विवेकं प्रतिजानीते (सदद्वैतमिति)—**

॥"सृष्टिके आगे यह सत् था" इस श्रुतिकेअर्थके कथनपूर्वक पंचमहाभूतविवेककी प्रतिज्ञा ॥

" हे सौम्य! सृष्टितैं पूर्व यह[2] जगत्

---

[1] ब्रह्मतैं पंचभूतनका विवेक (विवेचन) वा पचंभूतनतैं ब्रह्मका विवेक जिसविषै है। सो ॥

2 षट् प्रमाणादिकरि परिदृश्यमानजगत् प्रथम कारणब्रह्मरूप था ॥ जैसैं घट स्वउत्पत्तितैं पूर्व मृत्पिंडरूप होवै है। तैसैं ॥ इति ॥

ॐ

॥ अथ पञ्चकोशविवेकः॥३ ॥

॥ तृतीयप्रकरणम् ॥

॥ भाषाकर्तृकृतमङ्गलाचरणम् ॥

श्रीमत्सर्वगुरून् नत्वा पञ्चदश्या नृभाषया।
पञ्चकोशविवेकस्य कुर्वे तत्त्वप्रकाशिकाम् ॥ १ ॥

॥ अथ पञ्चकोश[1]विवेककी तत्त्वप्रकाशिकाव्याख्या ॥

टीका:-श्रीयुक्त सर्वगुरुनकूं नमस्कार करिके पंचदशीके पंचकोशविवेक नाम तृतीय प्रकरणकी नरभाषासैं तत्त्वप्रकाशिका। इस नामवाली व्याख्याकूं मैं करूं हूं ॥१ ॥

॥ टीकाकारकृत मङ्गलाचरणम् ॥

नत्वा श्रीभारतीतीर्थ विद्यारण्यमुनीश्वरौ।
पञ्चकोशविवेकस्य कुर्वे व्याख्यां समासतः ॥१ ॥

॥ संस्कृतटीकाकारकृत मङ्गलाचरण ॥

टीका:–श्रीमत् भारतीतीर्थ औ विद्यारण्य इन दोनूं मुनीश्वरनकूं नमस्कार करिके। पंचकोशविवेककी मैं संक्षेपकरिके व्याख्याकूं करूं हूं॥ १॥

१२)तैत्तिरीयोपनिषत्तात्पर्यव्याख्यानरूपंपञ्चकोशविवेकाख्यंप्रकरणमारभमाण आचार्यस्तत्र श्रोतृप्रवृत्तिसिद्धये सप्रयोजनमभिधेयं सूचयन् मुखतश्चिकीर्षितं ग्रन्थं प्रतिजानीते —

॥ग्रंथके विषय (गुहामैं स्थित ब्रह्म)औ फलके कथनपूर्वक आरंभकी प्रतिज्ञा॥

यजुर्वेदगततैत्तिरीयउपनिषद्के तात्पर्य्यके व्याख्यानरूप पंचकोशविवेक नामक पंचदशीके तृतीयप्रकरणकूं आरंभ करते हुये। आचार्य्य श्रीविद्यारण्यस्वामी तिस प्रकरणविषै श्रोता जो अधिकारी ताकी प्रवृत्तिकी सिद्धि वास्ते इस प्रकरणरूप ग्रंथके प्रयोजन औ विषय कूं सूचन करते हुये अपनैहीं मुखतैं प्रारंभ करनैकूं इच्छित ग्रंथकी प्रतिज्ञा करै हैं॥१२॥

---

1 पंचकोशनका आत्मातैं विवेचन वा आत्माका पंचकोशनतैं विवेचन जिसविषै है सो।

गुहाहितं ब्रह्म यत्तत्पञ्चकोशविवेकतः।
बोद्धुं शक्यं ततः कोशपञ्चकं प्रविविच्यते॥१॥

१३]गुहाहितं यत् ब्रह्म तत् पञ्चकोशविवेकतः बोद्धुं शक्यम्।ततः कोशपञ्चकं प्रविविच्यते॥

गुहाविषै स्थित जो ब्रह्म है सो जातैं पंचकोशनके विवेकतैं जाननैकूं शक्य है।तातैं पंचकोश विवेचन करिये हैं॥१३॥

१४)"यो वेद निहितं गुहायां परमे व्योमन्"(तै.२-१-१)**इतिश्रुत्या गुहाहितत्वेनाभिहितं यद्ब्रह्म अस्ति। तत् गुहाशब्दवाच्यान्नमयादि कोशपञ्चकविवेकेन ज्ञातुं शक्यते। ततः तेषां कोशानां पञ्चकम् प्रकर्षेण प्रत्यगात्मनःसकाशाद्विभज्य प्रदर्श्यत इत्यर्थः**

"प्रकर्षकरि परमव्योम जो अव्याकृतरूप आकाश है।तिसविषै विद्यमान जो पंचकोश रूप गुहा है तिसविषै स्थित ब्रह्मकूं जो पुरुष जानता है।सो पुरुष ज्ञानस्वरूप ब्रह्मके साथि एकीभूत[2] हुवा सर्वकामकूं[3] भोगताहै कहिये पूर्णकाम होवैहै॥" इस तैत्तिरीयश्रुतिकरि गुहाविषै स्थित होनैकरि कथन किया जो ब्रह्म है। सो ब्रह्म जातैं गुहाशब्दके वाच्यअर्थरूप जे पंचकोश हैं तिनके विवेकतैं जानि शकिये है। तातैं तिन कोशनके पंचककूं अतिशयकरि प्रत्यगात्मा जो आंतरआत्मा तातैं विभागकरि दिखाइये हैं। यह अर्थ है॥ १ ॥

१५)ननु केयं गुहा यस्यां निहितं ब्रह्म कोशपञ्चकविवेकेनावबुद्ध्यत इत्याशंक्य श्रुत्या गुहाशब्देन विवक्षितमर्थमाह —

॥ १ ॥पंचकोश औ आत्माका विवेचन॥ ७१५-७४७॥

॥ १ ॥ गुहाशब्दका भेदसहित अर्थ॥ ७१५-७१७॥

ननु कौन सो श्रुतिउक्त गुहा है।जा गुहामैं स्थित ब्रह्म।पंचकोशके विवेककरि जानिये है ? यह आशंकाकरिके श्रुतिकरि गुहाशब्दके कहनैकूं इच्छित अर्थकूं कहै है॥१५॥

देहादभ्यंतरः प्राणः प्राणादभ्यंतरं मनः।
ततःकर्त्ता ततो भोक्ता गुहा सेयं परम्परा॥२॥

१६]देहात् प्राणः अभ्यंतरः। प्राणात् मनः अभ्यंतरं। ततः कर्त्ता। ततः भोक्ता। सा इयं परम्परा गुहा॥

देहतैं भीतर प्राण है औ प्राणतैं भीतर मन है औ तिस मनतैं भीतर कर्त्ता कहिये बुद्धि है औ तिस बुद्धितैं भीतर भोक्ता कहिये आनंदमय है॥ सो यह परम्परा गुहा है कहिये

2 महाकाशके साथि घटाकाशकी न्यांई एकरूप॥

3 चक्रवर्तिराजासैं लेके ब्रह्मदेवपर्यंत विद्यमान सुखकूं॥

ॐ

॥ अथ द्वैतविवेकः ॥

॥ चतुर्थप्रकरणम् ॥

॥ भाषाकर्तृकृतमङ्गलाचरणम् ॥

श्रीमत्सर्वगुरून् नत्वा पञ्चदश्या नृभाषया।
कुर्वे द्वैतविवेकस्य व्याख्यां तत्त्वप्रकाशिकाम् ॥ १ ॥

॥अथ द्वैतविवेककी[1] तत्त्वप्रकाशिकाव्याख्या ॥ ४ ॥

टीका:–श्रीयुक्तसर्वगुरुनकूं नमस्कारकरिके पंचदशीके द्वैतविवेकनाम चतुर्थ प्रकरण की तत्त्वप्रकाशिकानामव्याख्या मैं करुं हूं ॥ १ ॥

॥ संस्कृतटीकाकारकृतमङ्गलाचरणम् ॥

नत्वा श्रीभारतीतीर्थविद्यारण्यमुनीश्वरौ।
मया द्वैतविवेकस्य क्रियते पदयोजना ॥ १ ॥

टीका:–श्रीभारतीतीर्थ औ श्रीविद्यारण्य इन दोनूंमुनीश्वरनकूं नमनकरिके मेरेकरि द्वैतविवेककी पदयोजना कहिये टीका करिये है ॥ १ ॥

॥ अथ द्वैतविवेकपदयोजना ॥ ४ ॥

१६)चिकीर्षितस्य ग्रंथस्य निष्प्रत्यूहपरिपूरणायाभिलषितदेवतातत्त्वानुस्मरण लक्षण मंगलमाचरन्नस्य वेदांतप्रकरणत्वाच्छास्त्रीयमेवानुबंधचतुष्टयंसिद्धवत्कृत्य ग्रंथारंभं प्रतिजानीते-

॥ग्रंथके आरंभकी प्रतिज्ञा औ प्रयोजन ॥

---

[1] दोप्रकारकूं जो पावै सो कहिये द्वैत (जगत्) ताका। विवेक कहिये जीवकृतजगत् औ ईश्वरकृतजगत् इत्यादि भेदकरिके विवेचन जिसमैं है सो **द्वैतविवेक**।
श्लो ॥द्विधेतं द्वीतमित्याहुःतद्भावो द्वैतमुच्यते। तन्निषेधेन चाद्वैतं प्रत्यग्वस्त्वभिधीयते ॥
[द्विधा इतं गतं = द्वीतम् (द्विप्रकारम्), तद्भावो द्वैतम्](बृहदारण्यक भाष्य वार्तिकम् ४-३-१९६)

करनेकूं इच्छित ग्रंथके निर्विघ्न परिपूर्ण होनेअर्थ इष्टदेवता जो परमेश्वर ताका तत्त्व जो स्वरुप ताके स्मरणरुप मंगलकूं आचरतेहुये आचार्य। इस द्वैतविवेककूं वेदांतशास्त्र जो शारीरक आदिक ताका प्रकरणरूप होनेतैं वेदांतशास्त्रके बी है। ऐसैं वेदांतशास्त्रकेही च्यारि अनुबंधनकूं इसविषै सिद्ध हुयेकी न्यांई जानिके। द्वैतविवेकनामक ग्रंथके आरंभकूं प्रतिज्ञा करै हैं ॥१६॥

ईश्वरेणापि जीवेन सृष्टं द्वैतं प्रपंच्यते।
विवेके सति जीवेन हेयो बंधः स्फुटीभवेत् ॥१॥

१७)ईश्वरेण जीवेन अपि सृष्टं द्वैतं प्रपंच्यते॥

ईश्वरकरि औ जीवकरि रचित द्वैत विवेचन करिये है ॥१७॥

१८)ईश्वरेण कारणोपाधिकेनांतर्यामिणा।जीवेनापि कार्योपाधिकेनाहंप्रत्ययिना च। सृष्टम् उत्पादितं। दैतं जगत्। विविच्यते विभज्य प्रदर्श्यते॥

मायारूप कारणउपाधिवाले अंतर्यामीईश्वरकरि औ अंतः करणरूप कार्यउपाधिवाले “मैं” इस प्रतीतिवान् जीवकरि बी रचित ऐसा द्वैत जो जगत् सो विवेचन करिये है। कहिये विभागकरिके दिखाइये है ॥१८॥

१९)अस्य द्वैतविवेचनस्य काकदंतपरीक्षावन्निः प्रयोजनत्वं वारयति —

इस द्वैतविवेचनके काककेदंतनकी[2] परीक्षाकीन्यांई निष्प्रयोजनपनैकूं निवारण करै हैं।

२०]विवेके सति जीवेन हेयःबंधःस्फुटीभवेत्॥

विवेकके हुये जीवकरि त्याज्य जो जगद्रूप बंध है सो स्पष्ट होवै है ॥२०॥

२१)विवेके सति जीवेश्वरसृष्टयोर्द्वैतयो विवेचने कृते सति।जीवेन पूर्वोक्तेन।हेयः परि-त्याज्यो बंधःबंधहेतुद्वैतं।स्फुटीभवेत् स्पष्टतांगच्छेत्।एतावज्जीवेन हेयमिति निश्चीयत इत्यर्थः।

विवेककेहुये कहिये जीव औ ईश्वरकरि रचित दोनूंद्वैतनके विवेचन कियेहुये। पूर्वउक्त जीवकरि[3] परित्याग करनैंकूं योग्य जो बंध है कहिये सुखदुः खरूप बंधका हेतु द्वैत जो जगत् है। सो स्पष्टताकूं पावता है। अर्थ यह जो इतना द्वैतहीं जीवकूं त्याग करने योग्य है यह निश्चय करिये है॥ १॥

२२)नन्वदृष्टद्वारा जीवानामेव जगद्धेतुत्वं वादिनो वर्णयंति अतः कथमीश्वर सृष्टत्व-मुच्यते जगत इत्याशंक्य। बहुश्रुतिविरोधान्नेदं चोद्यमुत्थापयितुमर्हति इत्यभिप्रेत्य श्वेताश्वतर वाक्यं तावदर्थतः पठति —

---

[2] श्लो॥काकस्य कति वा दन्ता मेषस्याण्डं कियत्फलम्। गर्दभे कति रोमाणीत्येषा मूर्ख विचारणा॥
[3]पूर्वले पंचकोशविवेकप्रकरणमैं कथन किया जो पंचकोशरूप उपाधिवाला जीव। तिसकरि॥

ॐ

॥ अथ महावाक्यविवेकः॥

॥ पञ्चमप्रकरणम्॥ ५॥

॥ भाषाकर्तृकृतमङ्गलाचरणम्॥

श्रीमत्सर्वगुरून् नत्वा पञ्चदश्या नृभाषया।
महावाक्यविवेकस्य कुर्वे तत्त्वप्रकाशिकाम्॥ १॥

॥ अथ महावाक्यविवेककी[1] तत्त्वप्रकाशिकाव्याख्या॥ ५॥

टीका:–श्रीयुक्त सर्वगुरुनकूं नमनकरिके नरभाषासैं पंचदशीके महावाक्यविवेक नाम पंचमप्रकरणकी तत्त्वप्रकाशिका नाम व्याख्या मैं करूं हूं॥ १॥

॥ संस्कृतटीकाकारकृतमङ्गलाचरणम्॥

नत्वा श्रीभारतीतीर्थविद्यारण्यमुनीश्वरौ।
महावाक्यविवेकस्य कुर्वे व्याख्यां समासतः॥ १॥

टीका:–श्रीमत्भारतीतीर्थ औ विद्यारण्य इन दोनूंमुनीश्वरनकूं नमनकरिके महावाक्य विवेककी व्याख्या मैं संक्षेपतैं करूं हूं॥ १॥

५९)मुमुक्षोः मोक्षसाधनब्रह्मात्मैकत्वावगति सिद्धये प्रसिद्धानां चतुर्णां महावाक्यानां अर्थं क्रमेण निरूपयन् परमकृपालुराचार्य आदौ तावदैतरेयारण्यकगते“प्रज्ञानं ब्रह्म”इतिमहा-वाक्ये“प्रज्ञान”शब्दस्यार्थमाह —

॥१॥ ऋग्वेदकी ऐतरेयउपनिषद्गत “प्रज्ञानं ब्रह्म” इस महावाक्यका अर्थ॥ ११५९-११६७॥

॥ १॥ “प्रज्ञान” पदका अर्थ। ११५९-११६१॥

मुमुक्षुनकूं मोक्षका साधन जो ब्रह्म आत्माकी एकताका ज्ञान है। तिसकी सिद्धिअर्थ च्यारिवेदनमैं प्रसिद्ध जे च्यारिमहावाक्य हैं। तिनके अर्थकूं क्रमतैं निरूपन करतेहुये परम कृपालु आचार्य श्रीविद्यारण्यस्वामी। आदिविषै प्रथम ऋग्वेदकी ऐतरेयारण्यकगत “प्रज्ञानं

[1] च्यारिमहावाक्यनका है विवेक कहिये वाच्यलक्ष्यरूप अर्थका विभाग जिसविषै सो॥

ब्रह्म”कहिये “प्रज्ञान ब्रह्म है” इस महावाक्यविषै प्रज्ञान “ शब्दके अर्थकूं कहै हैं॥ ५९॥

येनेक्षते श्रृणोतीदं जिघ्रति व्याकरोति च।
स्वाद्वस्वादू विजानाति तत्प्रज्ञानमुदीरितम्॥ १॥

६०]येन इदं ईक्षते श्रृणोति जिघ्रति व्याकरोति च स्वाद्वस्वादू विजानाति। तत् “प्रज्ञानं” उदीरितम्॥

जिस चैतन्यकरि पुरुष इस रूपादिककूं देखता है औ शब्दकूं सुनताहै औ गंधकूं सूंघता है औ शब्दकूं बोलताहै औ स्वादूअस्वादूरसकूं जानता है। सो वृत्तिउपलक्षितचैतन्य प्रज्ञान कहा है॥ ६०॥

६१)येन चक्षुद्वारा निर्गतांतः करणवृत्त्युपहितचैतन्येन।इदं दर्शनयोग्यं रूपादिकम् ईक्षते पश्यति।पुरुषः।तथा श्रोत्रद्वारा निर्गतांतः करणवृत्युपाधिकेन येन शब्दजातं श्रृणोति। तथैव घ्राणद्वारा निर्गतांतः करण।वृत्त्युपहितेनौपाधिकेन येन गंधजातं जिघ्रति।येन वागि-न्द्रियावच्छिन्नेन व्याकरोति शब्दजातंव्याहरति।येन रसनेन्द्रियद्वारा निर्गतांतः करणवृत्युपाधि-केन स्वाद्वस्वादू रसौ विजानाति॥ अनुक्तसमुच्चयार्थः चशव्दः।तथा चोक्तानुक्तैः सकलेंद्रियैः अंतः करणवृत्तिभेदैश्चोपलक्षितं यच्चैतन्यमस्ति।तत् एवात्र“प्रज्ञानम्” इत्युच्यत इत्यर्थः॥अनेन “येन वा पश्यति”इत्यादेः“सर्वाण्येवैतानि प्रज्ञानस्य नामधेयानि” इत्यंतस्यावांतरवाक्य संदर्भस्यार्थःसंक्षिप्य दर्शितः॥ १॥

जिस चक्षुद्वारा निकसी अंतः करणकी वृत्तिउपहितसाक्षीचैतन्यकरि इस देखनैयोग्य रूपआदिककूं संघातरूप पुरुष देखता है। तैसैं श्रोत्रद्वारा निर्गत अंतः करण वृत्तिरूप उपाधि वाले जिस चैतन्यकरि पुरुष शब्दके समूहकूं सुनता है। तैसैंही नासिकाद्वारा निर्गत अंतः करणवृत्तिरूप उपाधिवाले जिस चैतन्यकरि पुरुष गंधके समूहकूं सूंघता है।औ जिस वाक् इंद्रियअवच्छिन्न चैतन्यकरि पुरुष शब्दके समूहकूं बोलता है और रसनइंद्रियद्वारा निर्गत अंतः करणवृत्तिरूपउपाधिवाले जिस चैतन्यकरि स्वादुअस्वादु दोनूंभांतिके रसकूं पुरुष जानता है। इहां मूलश्लोकविषै जो“च” शब्द है सो नहीं कहे अन्यइंद्रियनके ग्रहण अर्थ है॥ तैसैं हुये। कही औ नहीं कही सकलइंद्रिय औ अंतः करणकी वृत्तिनकरि उपलक्षित जो कूटस्थचैतन्य हैं। सोइ इहां“प्रज्ञानं ब्रह्म” इस महावाक्यविषै “प्रज्ञान”ऐसैं कहिये है। यह अर्थ है। इस कहनैकरि जिसकरि “प्रसिद्ध देखताहै’ इस आदिवाला औ “सर्वहीं यह प्रज्ञानके नाम है”इसअंतवाला जो आत्माके स्वरूपके बोधक अवांतरवाक्यका✶ समूह है तिसका अर्थ संक्षेपकरिके दिखाया॥ १॥

✶ ऐतरेयारण्यकके षष्ठअध्यायविषै उपरिउक्त अवांतरवाक्यका कहिये “आत्माके स्वरूपके बोधक वाक्यका समूह” इसरीतिसैं है:-

ॐ

अथ चित्रदीपः

षष्ठं प्रकरणम्

॥ भाषाकर्तृकृतमङ्गलाचरणम् ॥

वाणीविनायकावीशौ सर्वसिद्धिविधायकौ।
भवतां भवतां ग्रन्थरचने च सहायकौ॥ १॥

॥ अथ श्रीचित्रदीपकी[1] तत्त्वप्रकाशिकाव्याख्या॥ ६॥

टीका:–वाणी जो सरस्वती औ विनायक जो गणपति ये दोनूं ईश्वर हैं। सो सर्वसिद्धिके विधायक कहिये कारक होहु औ ग्रंथकी रचनाविषै सहायक होहु॥ १॥

श्रीमत्सर्वगुरून् नत्वा पञ्चदश्या नृभाषया।
कुर्वेऽहं चित्रदीपस्य व्याख्यां तत्त्वप्रकाशिकाम्॥२॥

टीका:–श्रीयुक्त सर्वगुरुनकूं नमनकरिके। पंचदशीके चित्रदीपनाम प्रकरणकी नर-भाषासैं तत्त्वप्रकाशिकानाम व्याख्याकूं मैं करूंहूं॥ २॥

॥ अथ चित्रदीपतात्पर्यबोधिनीव्याख्या॥ ६॥

॥ संस्कृतटीकाकारकृतमङ्गलाचरणम्॥

शुक्लांबरधरं विष्णुं शशिवर्णं चतुर्भुजम्।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशांतये॥ १॥

टीका:–शुक्लअंबर कहिये श्वेतवस्त्रकूं धारणेहारे औ शशी नाम चंद्रमाके तुल्य वर्णवाले औ चतुर्भुज अरु प्रसन्नवदन जो सत्ययुगवर्ती विष्णु हैं। तिनकूं सर्वविघ्नोंकी शांतिअर्थ ध्यान करना॥ १॥

---

1 अधिष्ठानचेतनरूप वस्त्रविषै जगतरूप चित्रकूं दीपककी न्यांई प्रकाशनैहारा जो ग्रंथ नाम प्रकरण सो चित्रदीप कहिये है॥

यस्य स्मरणमात्रेण विघ्ना दूरं प्रयांति हि।
वंदेऽहं दंतिवक्रं तं वांच्छितार्थप्रदायकम् ॥२ ॥

टीका:–जिसके स्मरणमात्रकरिहीं प्रतिबंधकपापरूप विघ्न दूरकूं[2] प्रकर्ष कहिये अतिशयकरि जातें हैं। तिस वांछित नाम प्रियअर्थका प्रकर्षकरि देनैहारा दंतिवक्र जो गजवदन गणेश ताकूं मैं वंदन करूंहूं ॥ २ ॥

नत्वा श्रीभारतीतीर्थविद्यारण्यमुनीश्वरौ।
क्रियते चित्रदीपस्य व्याख्यां तात्पर्यबोधिनीम् ॥ ३ ॥

टीका:–श्रीभारतीतीर्थ औ विद्यारण्य इन दोनूंमुनीश्वरनकूं नमनकरिके चित्रदीपकी तात्पर्यबोधिनी[3] नाम व्याख्या मेरेकरि करिये है॥ ३ ॥

॥ मूलकारकृत मङ्गलाचरणम् ॥

यथा चित्रपटे दृष्टमवस्थानां चतुष्टयम्।
परमात्मनि विज्ञेयं तथाऽवस्थाचतुष्टयम् ॥ १ ॥

१)चिकीर्षितस्य ग्रंथस्य निष्प्रत्यूहपरिपूरणाय"परमात्मनि"इतिपदेन इष्टदेवता तत्त्वानुसंधानलक्षणं मंगलमाचरन्नस्य ग्रंथस्य वेदांतप्रकरणत्वात्तदीयैरेव विषयादिभिः तद्वत्तासिद्धिं मनसि निधाय"अध्यारोपापवादाभ्यां निष्प्रपंचं प्रपंच्यत"इति न्यायमनुसृत्य परमात्मन्यारोपितस्य जगतःस्थितिप्रकारं सदृष्टांतं प्रतिजानीते (यथेति)

॥१ ॥ आरोपितजगतकी स्थिति औ ज्ञानकरि निवृत्तिका प्रकार॥ ॥१२०१-१२४६ ॥

॥१ ॥जगतके आरोपमैं पटरूप दृष्टांत औ चेतनरूप सिद्धांतकी च्यारीअवस्था॥ ॥ १२०१-१२१२ ॥

॥ १ ॥ उक्तदृष्टांतसिद्धांतके च्यारीअवस्थाकी प्रतिज्ञा॥

करनैकूं इच्छित चित्रदीपरूप ग्रंथकी निर्विघ्नपरिपूर्णताअर्थ"परमात्मनि"कहिये परमात्माविषै[4]।इस पदकरि इष्टदेवता जो प्रत्यक्अभिन्नब्रह्म ताका तत्त्व जो स्वरूप।ताके स्मरणरूप मंगलकूं आचरतेहुये आचार्य।इस चित्रदीपग्रंथकूं वेदांत शास्त्रका प्रकरण होनैतैं तिस वेदांतशास्त्रकेही विषयआदिकच्यारिअनुबंधनकरि तिस अनुबंधवानताकी सिद्धिकूं मनविषै

---

2 यद्यपि दूर गये जे विघ्न वे परदेशकूं गये पुरुषकी न्यांई फेर प्राप्त होवेंगे। तथापि इहां प्रकर्षपद पडा है तिसकरि विघ्न फेर प्राप्त होवैं नहीं किंतु नष्टहीं होवैं हैं। यह अर्थ है॥

3 पद औ वाक्यनके वक्ताकी इच्छारूप तात्पर्यकूं बोधन करनैहारी टीका॥

4"परमात्मनि" यह जो मूलश्लोकविषै पद है सो अन्य अर्थ कियेबी मंगलके प्रयोजक मृदंगआदिक ध्वनिकी न्यांई प्रसंगप्राप्तअर्थ औ मंगल दोनूंका प्रयोजक है॥

ॐ

॥ अथ तृप्तिदीपः ॥

॥ सप्तमं प्रकरणम् ॥

॥ अथ तृप्तिदीपव्याख्या ॥ ७ ॥

॥ भाषाकर्तृकृतमङ्गलाचरणम् ॥

अखंडानंदबोधाय शिष्यसंतापहारिणे ।
सच्चिदानंदरूपाय रामाय गुरवे नमः ॥ १ ॥

॥ अथ तृप्तिदीपकी[1] तत्त्वप्रकाशिकाव्याख्या ॥ ७ ॥

टीकाः–अखंड आनंदका है बोध जिसकूं औ शिष्यनके संतापकूं हरनैहारे औ सच्चिदानंदस्वरूप ।ऐसैं हमारे परगुरु राम(अखंडानंदसरस्वती)केतांई मेरा नमस्कार होहु ॥१

अज्ञानवारणव्रात सुनिवारणकारिणे ।
महावाक्यरवेणैव बापवे गुरवे नमः ॥ २ ॥

टीकाः–तत्त्वमसि आदिकमहावाक्यरूप रव(शब्द)करिहीं अनेकजीवनके अज्ञानांशरूप हस्तिनके समुदायके सुष्ठुप्रकारकरि निवारणके करनैहारे बापुसरस्वतीसद्गुरुरूप केसरीके तांई मेरा नमस्कार होहु ॥ २ ॥

श्रीमत्सर्वगुरून् नत्वा पंचदश्या नृभाषया ।
कुर्वेऽहं तृप्तिदीपस्य व्याख्यां तत्त्वप्रकाशिकाम् ॥ ३ ॥

टीकाः–श्रीयुक्तसर्वगुरुनकूं नमस्कारकरिके पंचदशीके तृप्तिदीपनाम प्रकरणकी तत्त्व-प्रकाशिकानामव्याख्याकूं मैं करूं हूं ॥ ३ ॥

॥ संस्कृतटीकाकारकृतमङ्गलाचरणम् ॥

---

[1] अनुकूलवस्तुके अनुभवरूप भोगकी आवृत्तिके हुये जो सुखका उदय होवै है। सो तृप्ति कहिये है। ताकूं दीपककी न्यांई प्रकाशनैहारा प्रकरण तृप्तिदीप है।

अखंडानंदरूपाय शिवाय गुरवे नमः।
शिष्याज्ञानतमोध्वंसपट्वर्केन्द्वग्निमूर्त्तये ॥ १ ॥

टीका:–अखंडआनंदरूप औ शिव(कल्याण)स्वरूप औ शिष्यनके अज्ञानरूप तमके नाशविषै पटु (कुशल) हैं। सूर्य चंद्र औ अग्निकी न्यांई[2] मूर्ति जिसकी।ऐसैं गुरुके तांई मेरा नमस्कार होहु ॥१ ॥

वेदार्थस्य प्रकाशेन तमो हार्दं निवारयन्।
पुमर्थांश्चतुरो देयाद्विद्यातीर्थमहेश्वरः ॥ २ ॥

टीका:–विद्यातीर्थ[3] जो महेश्वर है। सो वेद अर्थके प्रकाशकरि हृदयगततमकूं निवारण करता हुया।धर्म अर्थ काम औ मोक्षरूप च्यारीपुरूषार्थनकूं देहु ॥ २ ॥

नत्वा श्रीभारतीतीर्थविद्यारण्यमुनीश्वरौ।
क्रियते तृप्तिदीपस्य व्याख्यानं गुर्वनुग्रहात् ॥ ३ ॥

टीका:–श्रीभारतीतीर्थ औ विद्यारण्य इन दोनूंमुनीश्वरनकूं नमनकरिके गुरुनके अनुग्रह-तैं मेरेकरि तृप्तिदीपका व्याख्यान करिये है ॥ ३ ॥

७८)तृप्तिदीपाख्यं प्रकरणमारभमाणः श्रीभारतीतीर्थगुरुः तस्य श्रुति व्याख्यान रूपत्वात्। तद्व्याख्येयां श्रुतिमादौ पठति (आत्मानं चेदिति) —

॥ १ ॥ "आत्माकूं जब जानै" इस श्रुतिगत "पुरुष" औ "अहं अस्मि" पदका अभिप्राय (प्रयोजनसहित पुरुषका स्वरूप) ॥ २१७८-२२४५ ॥

॥ १ ॥ ग्रंथारंभ ॥ २१७८- २१८२ ॥

॥ १ ॥ सारेतृप्तिदीपमैं व्याख्यान योग्य श्रुतिका पठन ॥

अब तृप्तिदीपनामप्रकरणकूं आरंभकरतेहुये श्रीभारतीतीर्थगुरु।तिस तृप्तिदीपकूं श्रुतिका व्याख्यानरूप होनैतैं तिसविषै व्याख्यान करनेके योग्य बृहदारण्यक उपनिषद्गतश्रुतिकूं आदिविषै पठन करै हैं ॥ ७८ ॥

आत्मानं चेद्विजानीयादयमस्मीति पूरुषः।
किमिच्छन् कस्य कामाय शरीरमनुसंज्वरेत् ॥ १ ॥(बृ.४-४-१२)

---

[2] सूर्य। तमका निवारक है। तौ बी तापका जनक हैं। इसतैं विलक्षणता अर्थ चंद्रकी उपमा हैं॥ औ चंद्र शांतप्रकाशवान हुया तमका निवारक है। तौ बी आंतरबाह्यसर्वतमका निवारक नही हैं।औ अग्नि जो (महातेजरूप)सो दीपसूर्यचंद्रआदिकज्योतिरूपकरि आंतरबाह्यसर्वतमका निवारक है। यातैं अग्निकी उपमाका ग्रहण है॥

[3] भारतीतीर्थ वा विद्याकूं पवित्र करनैहारे शंकराचार्य॥

७९]पुरुषः आत्मानं अयं अस्मि इति विजानीयात् चेत् किम् इच्छन् कस्य कामाय शरीरं अनुसंज्वरेत् ॥ १ ॥

पुरुष कहिये जीव ।आत्माकूं 'यह मैं हूं' इसप्रकार जब जानै। तब किस भोग्यविषयकूं इच्छताहुया किस भोक्ताके कामअर्थ कहिये भोगअर्थ शरीरके पीछे ज्वर जो संताप ताकूं पावै ॥ १ ॥

८०)इदानीं चिकीर्षितग्रंथविचारं तत्फलं च दर्शयति (अस्या इति) —

॥ २ ॥ ग्रन्थका विचार औ फल ॥

अब करनैकूं इच्छित ग्रंथके विचारकूं औ तिस विचारके फलकूं दिखावै है ॥८० ॥

अस्याः श्रुतेरभिप्रायः सम्यगत्र विचार्यते।
जीवन्मुक्तस्य या तृप्तिः सा तेन विशदायते॥ २ ॥

८१]अत्र अस्याः श्रुतेः अभिप्रायः सम्यक् विचार्यते। तेन जीवन्मुक्तस्य या तृप्तिः सा विशदायते॥

इहां इस प्रथमश्लोकउक्त श्रुतिका अभिप्राय सम्यग्विचार करिये है॥ तिस विचारकरि जीवन्मुक्तकी जो तृप्ति है। सो स्पष्ट होवै है॥ २ ॥

८२)अत्र तृप्तिदीपाख्ये ग्रंथे अस्या आत्मानं चेत् इत्यादिकायाः श्रुतेरभिप्रायः सम्यग्विचार्यते।तेन अभिप्रायविचारेण जीवन्मुक्तस्य श्रुतिप्रसिद्धा या तृप्तिः सा विशदायते स्पष्टी भवति॥ २ ॥

इस तृप्तिदीपनामग्रंथविषै 'आत्माकूं जब जानै'इस आदिवाली श्रुतिका अभिप्राय सम्यग्विचार करिये है। तिस श्रुतिअभिप्रायके विचारकरि जीवन्मुक्तकी श्रुतिनविषै प्रसिद्ध जो तृप्ति है। सो स्पष्ट होवै है॥ २ ॥

८३)"पदच्छेदः पदार्थोक्तिर्विग्रहो वाक्ययोःजना। आक्षेपस्य समाधानं व्याख्यानं पंचलक्षणम्॥"(पराशरउपपुराणम् १८-१७)**इति व्याख्यानलक्षणस्योक्तत्वात्'पुरुष'इति पदस्यार्थमभिधातुं तदुपोद्घातत्वेन सृष्टिं संक्षिप्य दर्शयति —**

॥ २ ॥ पुरुष पदके अर्थमै उपयोगी सृष्टिके कथन पूर्वक पुरुष शब्दका अर्थ॥ २१८३ - २१९७ ॥

॥ १ ॥ जीवईशआदिकसृष्टिका कथन॥

पदच्छेद[4]। पदनके अर्थका कथन विग्रह[5] ।वाक्यकी योजना(अन्वय) ।औ आक्षेपका (शंकाका)समाधान।इन पंचलक्षणवाला व्याख्यानहै।ऐसैं शास्त्रांतरविषै व्याख्यानके लक्षणकूं

[4] श्लोकके पदनकू भिन्न भिन्न करनैका नाम पदच्छेद है॥

[5] समासयुक्त अरु विभक्तिअंतवाले पदनका यथायोग्यअर्थके अनुसार भिन्नभिन्न करि जनावना विग्रह हैं॥

ॐ

॥अथ [1]कूटस्थदीपः॥

॥ भाषाकर्तृकृतमङ्गलाचरणम् ॥

श्रीमत्सर्वगुरून् नत्वा पंचदश्या नृभाषया।
कुर्वे कूटस्थदीपस्य टीकां तत्त्वप्रकाशिकाम्॥ १॥

॥ अथ श्रीकूटस्थदीपकी तत्त्वप्रकाशिका व्याख्या ॥८॥

टीकाः–श्रीयुक्तसर्वगुरुनकूं नमस्कारकरिके पंचदशीके कूटस्थदीप नाम अष्टम प्रकरण की नरभाषामैं तत्त्वप्रकाशिका नामक टीकाकूं मैं करुं हूं ॥१॥

॥संस्कृत टीकाकारकृत मङ्गलाचरणम्॥

नत्वा श्रीभारतीतीर्थविद्यारण्यमुनीश्वरौ।
कुर्वे कूटस्थदीपस्य व्याख्यां तात्पर्यदीपिकाम्॥१॥

टीकाः-श्रीमद्भारतीतीर्थ औ विद्यारण्य इन दोनूं मुनीश्वरनकूं नमस्कारकरिके मैं कूटस्थदीपकी तात्पर्यदीपिका कहिये तात्पर्यरूप अर्थकूं प्रकाशनेहारी व्याख्यानकूं करूं हूं ॥१॥

४)अत्र मुमुक्षोर्मोक्षसाधनस्य ब्रह्मात्मैकत्वज्ञानस्य त्वंपदार्थ शोधनपूर्वकत्वात्त्वंपदार्थ शोधनपरं कूटस्थदीपाख्यं ग्रंथमारभमाण आचार्योऽस्य ग्रंथस्य वेदांतप्रकरणत्वेन तदीयैरेव विषयादिभिस्तद्वत्तासिद्धिमभिप्रेत्य त्वंपदलक्ष्यवाच्यौकूटस्थजीवौ सदृष्टांतं भेदेन निर्दिशति-

॥१॥देहके बाहिर औ भीतर चिदाभासका ब्रह्म औ कूटस्थसैं भेदकरि निरूपण॥

॥ ३२०४-३३६४॥

॥१॥"त्वं" पदके लक्ष्य औ वाच्यके कथनपूर्वक देहके बाहिर चिदाभास औ ब्रह्मका भेद॥ ॥३२०४-३२५९॥

---

[1] चित्रदीपगत २२ वें श्लोकउक्तअर्थरूप"त्वं" पदके लक्ष्यार्थ प्रत्यगात्मारूप कूटस्थका दीपककीन्यांई प्रकाशनैहारा प्रकरणरूप ग्रंथ।

॥ १ ॥दृष्टांतसहित "त्वं"पदके लक्ष्य औ वाच्यका कथन ॥

इस संसारविषै मुमुक्षुपुरुषकूं मोक्षका साधन जो ब्रह्मआत्माकीएकताका ज्ञान है ताकूं "त्वं"पदार्थकेशोधनपूर्वकहोनेतैं ।"तत्त्वमसि"महावाक्यगत"त्वं"पदकेअर्थके शोधनपर कूट-स्थदीपनामक ग्रंथकूं आरंभ करतेहुये आचार्य ।इस कूटस्थदीपग्रंथकूं वेदांतशास्त्रका प्रकरण होनैकरि तिस वेदांतशास्त्रकेहीं विषय आदिकच्यारी अनुबंधनकरि अनुबंधवानताकी सिद्धि है। इस अभिप्रायकरिके "त्वं" पदके लक्ष्य औ वाच्यरूप कूटस्थ औ जीवकूं दृष्टांतसहित भेदकरि कहै हैं ॥४ ॥

खादित्यदीपिते कुड्ये दर्पणादित्यदीप्तिवत् ।
कूटस्थभासितो देहो धीस्थजीवेन भास्यते ॥ १ ॥

५]खादित्यदीपिते कुड्ये दर्पणादित्यदीप्तिवत् कूटस्थभासितः देहः धीस्थजीवेन भास्यते ॥

आकाशगतआदित्यकरिप्रकाशित भित्तिविषै दर्पणगतआदित्यकेदीप्ति जो प्रकाश ताकी त्यांई कूटस्थकरि भासित जो देह है। सो बुद्धिविषै स्थित जीवकरि भासित होवै है ॥५ ॥

६)खादित्यदीपिते खे आदित्यःखादित्यः प्रसिद्धः सूर्य इत्यर्थः।तेन च तत्संबंध्यालोको लक्ष्यते।तेन दीपिते प्रकाशिते।कुड्ये दर्पणादित्यदीप्तिवत् दर्पणेषुनिपत्य पर्यावृत्तैश्च कुड्य-संबद्धैरादित्यरश्मिभिस्तत्प्रकाशनमिव। कूटस्थभासितः कूटस्थेनाविकारिचैतन्येन भासितः प्र-काशितोदेहो धीस्थजीवेन बुद्धिस्थचिदाभासेन भास्यते प्रकाश्यते।अनेन सामान्यतो विशे-षतश्च कुड्यावभासकादित्यप्रकाशद्वयमिव देहावभासकचैतन्यद्वयमस्तीति प्रतिज्ञातंभवति ॥

आकाशविषै प्रसिद्ध सूर्य है।तिसकरि इहां तिसका संबंधीआलोक जो प्रकाश सो लखिये है।तिस आकाशविषै स्थित सूर्यके प्रकाशकरि प्रकाशित भित्तिविषै दर्पणगत आदित्यकी दीप्तिकीन्यांई कहिये अनेक दर्पणनविषै पतन होयके पीछे लौटे औ भित्तिसैं संबंधकूं पाये जे सूर्यकेकिरण तिनकरि भित्तिके प्रकाशकीन्यांई।अविकारीचैतन्यकरि प्रकाशित जो देह है।सो बुद्धिविषैस्थित चिदाभासरूप जीवकरि प्रकाशित होवैहै।इस कथन करि सामान्यतैं औ विशेषतैं भित्तिके प्रकाशकसूर्यके दोप्रकाशनकी न्यांई देहके सामान्यतैं औ विशेषतैं प्रकाशक दोचैतन्य हैं। यह अर्थ प्रतिज्ञा किया है ॥१ ॥

७)ननु तत्र दर्पणादित्यदीप्तिव्यतिरेकेण खादित्यदीप्तिर्नोपलभ्यत इत्याशंक्य ताभ्यस्तां विभज्य दर्शयति ॥

॥ २ ॥प्रथमश्लोकउक्तदृष्टांतका वर्णन ॥

ननु। तिस भित्तिविषै दर्पणगतसूर्यकी दीप्ति जे प्रकाश। तिनसैं भिन्नकरि आकाश

ॐ

॥ अथ [1]ध्यानदीपः॥

॥नवमंप्रकरणम्॥

॥भाषाकर्तृकृतमङ्गलाचरणम्॥

श्रीमत्सर्वगुरून् नत्वा पंचदश्या नृभाषया।
कुर्वेऽहं ध्यानदीपस्य व्याख्यां तत्त्वप्रकाशिकाम्॥

टीका:-श्रीयुक्त सर्वगुरुनकूं नमस्कारकरिके पंचदशीके ध्यानदीपनामक नवम प्रकरणकी तत्त्वप्रकाशिका नाम व्याख्याकूं नरभाषासैं मैं करूंहूं॥ १॥

॥संस्कृतटीकाकारकृत मङ्गलाचरणम्॥

नत्वा श्रीभारतीतीर्थविद्यारण्यमुनीश्वरौ।
क्रियते ध्यानदीपस्य व्याख्या संक्षेपतो मया॥१॥

टीका:–श्रीभारतीतीर्थ औ विद्यारण्यमुनीश्वरनकूं नमस्कारकरिके ध्यानदीपकी संक्षेपतैं व्याख्या मेरेकरि करिये है॥ १॥

४२)इह तावद्वेदांतशास्त्रे नित्यानित्यवस्तुविवेकादिसाधनचतुष्टयसंपन्नस्य सम्यक् श्रवणमननिदिध्यासनानुष्ठानवतः तत्त्वं पदार्थविवेचनपूर्वकं महावाक्यार्थापरोक्षज्ञानेन ब्रह्म भावलक्षणो मोक्षो भवतीति प्रतिपादितम्।तत्र श्रुतोपनिषत्कस्यापि बुद्धिमांद्यादिना केनचित् प्रतिबंधेन वाक्यार्थविषयापरोक्षप्रमित्यनुत्पत्तौ सत्यां तदुत्पादनद्वारा मोक्षफलकोपासनानि दिदर्शयिषुरादौ तावत्सदृष्टांतं ब्रह्मतत्त्वोपासनयापि मोक्षो भवतीति प्रतिजानीते –

॥१॥संवादीभ्रमकी न्यांई ब्रह्मतत्त्वकी उपासनातैं बी मुक्तिके परोक्षज्ञानसैं कथनपूर्वक ब्रह्मकी उपासनाका प्रकार॥ ३४४२-३५३७॥

॥१॥संवादीभ्रमकी न्यांईं ब्रह्मतत्त्वकी उपासनासैं बी मुक्तिका संभव॥३४४२-३४८२॥

[1] ध्यान(निर्गुणउपासन) कूं प्रकाशनैहारा प्रकरण॥

॥१॥दृष्टांत औ प्रमाणसहित ब्रह्मतत्त्वकी उपासनासैं मुक्तिकी प्रतिज्ञा॥

इहां प्रथम वेदांतशास्त्रविषै नित्यानित्यवस्तु[2] के विवेकसैं आदिलेके च्यारीसाधनकरि संयुक्त औ सम्यक् श्रवण मनन अरु निदिध्यासनके अनुष्ठानवाले[3] अधिकारीकूं "तत् त्वं" पदकेअर्थ ब्रह्म औ आत्माके विवेचनपूर्वक महावाक्यके अर्थरूप ब्रह्मआत्माका अपरोक्षज्ञान करि ब्रह्मभावरूप मोक्ष होवैहै। ऐसैं प्रतिपादन कियाहै॥ तहां उपनिषदनका जिसनैं श्रवण कियाहै। ऐसैं अधिकारीकूं बी बुद्धिमंदता आदिक किसी 'प्रतिबंधकरि[4] महावाक्यके अर्थकूं विषयकरनैहारी यथार्थअनुभवरूप अपरोक्षप्रमाकी अनुत्पत्तिके हुये तिस अपरोक्षप्रमाकी उत्पत्तिद्वारा मोक्षफलवाली उपासनाके दिखावनैकूं इच्छतेहुये आचार्य आदिविषै प्रथम दृष्टांतसहित ब्रह्मतत्त्वकी उपासनासैं बी मोक्ष होवै है। ऐसैं प्रतिज्ञा करै हैं॥४२॥

संवादिभ्रमवद्ब्रह्मतत्त्वोपास्त्यापि मुच्यते।
उत्तरे तापनियेऽतःश्रुतोपास्तिरनेकधा॥ १॥

४३]संवादिभ्रमवत् ब्रह्मतत्त्वोपास्त्या अपि मुच्यते॥

संवादी भ्रमकी न्यांई ब्रह्मतत्त्वकी उपासनासैं बी पुरुष मुक्त होवैहै॥४३॥

४४)यथा संवादिभ्रमेण प्रवृत्तस्याभिप्रेतार्थलाभो भवति। एवं ब्रह्मतत्त्वोपासनया अपि अभिलषितब्रह्मभावलक्षणो मोक्षो भवतीत्यर्थः॥

जैसैं संवादी भ्रमकरि प्रवर्त्तभये पुरुषकूंवांछित अर्थकालाभ होवैहै।ऐसैं ब्रह्मतत्त्व की उपासनासैं बी मुमुक्षुकूं वांछित ब्रह्मभावरूप मोक्ष होवै है। यह अर्थ है॥४४॥

---

[2] (१)नित्यवस्तु जो ब्रह्मात्मा और अनित्यवस्तु जो अनात्मारूप जगत् ताका विवेक कहिये अविकारित्वविकारित्वआदिक भेदज्ञानरूप विचार प्रथमसाधन है। सो सर्वसाधनका कारण है।औ

(२)आदिशब्दकरि त्यागकी इच्छा वा इच्छाराहित्यरूप वैराग्य।औ

(३)शम कहिये बाह्यशब्दादिविषयनतैं मनका निग्रह। दम कहिये विषयनतैं बाह्यइंद्रियनका निग्रह। उपरति कहिये त्याग किये वस्तुकी अनिच्छा। तितिक्षा कहिये शीतोष्णादिकद्वंद्वके सहनका स्वभाव। श्रद्धा नाम गुरुवेदांतवाक्यविषै विश्वास। समाधान कहिये ब्रह्मरूप लक्ष्यविषै चित्तकी एकाप्रतारूप षट् संपत्ति। औ

(४)तीव्रमोक्षकी इच्छा॥

इनका ग्रहण है। ये च्यारीसाधन हैं। तिनकरि संयुक्त जो पुरुष है। सो अधिकारी है॥

[3] श्रवणका लक्षण देखो प्रत्यक्तत्त्वविवेकगत ५३ वें औ तृप्तिदीपगत १०१ वें श्लोकनविषै॥ मनन का लक्षण देखो प्रत्यक्तत्त्वविवेककै ५३ वें और तृप्तिदीपके १०२ वें श्लोकनविषै॥ निदिध्यासनका लक्षण देखो प्रत्यक्तत्वविवेकके ५४ वें औ तृप्तिदीपगत १०६ अरु ११२ श्लोकनविषै॥ इन तीनके अनुष्ठान (आचरण)वाले अधिकारीकूं॥

[4] प्रतिबंधका स्वरूप देखो आगे ३५६३-३६२३। अंकपर्यंत॥ इसहीं प्रकरणके श्लोक ३८-५३॥

ॐ

॥ अथ [1]नाटकदीपः ॥

॥ दशमंप्रकरणम् ॥ १० ॥

॥ भाषाकर्तृकृतमङ्गलाचरणम् ॥

श्रीमत्सर्वगुरून् नत्वा पञ्चदश्या नृभाषया।
कुर्वे नाटकदीपस्य टीकां तत्त्वप्रकाशिकाम् ॥१ ॥

॥ अथ नाटकदीपकी तत्त्वप्रकाशिका व्याख्या ॥१० ॥

टीका:-श्रीयुक्तसर्वगुरुनकूं नमनकरिके पंचदशीके नाटकदीपनाम दशमप्रकरणकी तत्त्वप्रकाशिकानामक टीकाकूं नरभाषासैं मैं करुंहूं ॥१ ॥

॥ संस्कृतटीकाकारकृतमङ्गलाचरणम् ॥

नत्वा श्रीभारतीतीर्थविद्यारण्यमुनीश्वरौ।
अर्थो नाटकदीपस्य मया संक्षिप्य वक्ष्यते ॥१ ॥

टीका:-श्रीमत्भारतीतीर्थ औ विद्यारण्य इन दोमुनीश्वरनकूं नमनकरिके मेरेकरि नाटक दीपका अर्थ संक्षेपकरिके कहिये है ॥१ ॥

४५)चिकीर्षितस्य ग्रंथस्य निष्पत्यूहपरिपूरणायाभिमतदेवता तत्त्वानुस्मरणलक्षणं मंगलमाचरन्मंदाधिकारिणामनायासेन निष्प्रपंचब्रह्मात्मप्रतिपत्तिसिद्धये “अध्यारोपापवादाभ्यां निष्प्रपंचं प्रपंच्यते।शिष्याणां बोधसिद्ध्यर्थं तत्त्वज्ञैः कल्पितः क्रमः ”इति न्यायमनुसृत्यात्मन्य-ध्यारोपं तावदाह (परमात्मेति)

॥१ ॥अध्यारोप औ अपवादपूर्वक बंधनिवृत्तिके उपाय विचारका विषय (जीव परमात्मा) सहित कथन ॥३९४५-३९९९ ॥

---

[1] चेतनविषै अध्यस्त अहंकारादिककूं औ तिनके प्रकाशक साक्षीकूं नाटकका रूपककरि प्रकाश करनेहारा प्रकरण ॥

॥१॥अध्यारोप औ साधन (विचारजन्य ज्ञान) सहित अपवाद॥ ३९४५- ३९६२॥

॥१॥ आत्मा मैं अध्यारोप॥

प्रारंभकरनैकूं इच्छित नाटकदीपरूपग्रंथकी निर्विघ्नपरिपूर्णता अर्थ इष्टदेवताके स्वरूपके स्मरणरूप मंगलकूं आचरतेहुये आचार्य। मंदअधिकारिनकूं श्रमसैंविना निष्प्रपंचब्रह्म आत्माके निश्चयकी सिद्धिअर्थ "अध्यारोप औ अपवादकरि प्रपंचरहित परमात्माकूं निरूपण करिये है॥ शिष्यनके बोधकी सिद्धिअर्थ तत्त्वज्ञपुरुषोंनैं क्रम कल्प्या है" इस न्यायकूं अनुसरिके आत्माविषै अध्यारोपकूं प्रथम कहै हैं॥४५॥

परमात्माद्वयानंदपूर्णः पूर्वं स्वमायया।
स्वयमेव जगद्भूत्वा प्राविशज्जीवरूपतः॥ १॥

४६]पूर्वं अद्वयानंदपूर्णः परमात्मा स्वमायया स्वयं एव जगत् भूत्वा जीवरूपतः प्राविशत्॥

पूर्व अद्वय आनंद औ पूर्णरूप जो परमात्मा था। सो अपनी मायाकरि आपहीं जगद्रूप होयके तिसविषै जीवरूपसैं प्रवेश करताभया॥४६॥

४७)पूर्वं सृष्टेः प्राक्।अद्वयानंदपूर्णः "सदेवसोम्येदमग्र आसीदेकमेवाद्वितीयम्"(छां.उ. ६-२-१)**"विज्ञानमानंदं ब्रह्म"**(बृ.उ.३-९-३४)**"पूर्णमदः पूर्णम्"**(बृ.उ.५-१-१ शान्तिपाठ) **इत्यादि श्रुतिप्रसिद्धः स्वगतादिभेदशून्यः परमानंदरूपः परिपूर्णः।परमात्मा स्वमायया"मायां तु प्रकृतिं विद्यान्मायिनं तु महेश्वरम्"**(श्वे.उ.४-१०) **इति श्रुत्युक्तया स्वनिष्ठया मायाशक्त्या स्वयमेव जगद्भूत्वा"तदात्मानं स्वयमकुरुत"**(तै.उ.२-७)**"सच्च त्यच्चाभवत्"**(तै.उ.२-६)**इतिश्रुतेः स्वयमेव जगदाकारतांप्राप्य जीवरूपतः प्राविशत्।"तत्सृष्ट्वा तदेवानुप्राविशत्"**(तै.उ.२-६)**"अनेन जीवेनात्मनानुप्रविश्य"**(छां.उ.६-३-२) **इत्यादिश्रुतेः जीवरूपेण प्रविष्टवानित्यर्थः ॥ १॥**

सृष्टितैं पूर्व अद्वय आनंद औ पूर्ण कहिये "हे सोम्य! यह जगत् आगे एकहीं अद्वितीय सतहीं था" औ "विज्ञानानंदरूप ब्रह्म है" औ "यह पूर्ण है। यह पूर्ण है" इत्यादिश्रुतिकरि प्रसिद्ध जो स्वगतआदिकभेदरहित[2] परमानंदरूप परिपूर्णपरमात्मा था। सो अपनी मायाकरि कहिये "माया तौ प्रकृति नाम उपादान जानै औ मायावालेकूं तौ महेश्वर नाम मायाका अधिष्ठाननिमित्त जानै" इसश्रुतिमैं उक्त अपनैविषै स्थित माया शक्तिकरि आपहीं जगत् रूप होयके कहिये "सो ब्रह्म आपहीं आपकूं करतभया; स्थूलसूक्ष्मरूप होताभया" इस श्रुतितैं आपहीं जगत आकारताकूं पायके जीवरूपकरि प्रवेश करताभया कहिये "तिस जगतकूं

[2] परमात्माकी स्वगतआदिकतीन भेदसैं रहितताकूं। देखो पंचमहाभूतविवेकगत २० वें श्लोकके ७८ अंकसैंलेके २५ वें श्लोकके ९७ अंकपर्यंत औ तिनकी ७५-८२ टिप्पणविषै॥

ॐ

॥ अथ ब्रह्मानंदे [1]योगानंदः॥११ ॥

॥ प्रथमोऽध्यायः॥ १ ॥

॥ भाषाकर्तृकृतमङ्गलाचरण ॥

श्रीमत्सगुरून् नत्वा पंचदश्या नृभाषया।
योगानंदस्य व्याख्यानं ब्रह्मानंदगतस्य हि॥ १॥

टीका:-श्रीयुक्त सर्वगुरुनकूं नमनकरिके पंचदशीके तीन वा पांचअध्यायरूप ब्रह्मानंद नामग्रंथगत योगानंदनामप्रकरणके तत्त्वप्रकाशिकाख्य व्याख्यानकूं नरभाषाकरि मैं स्पष्ट करुंहूं ॥१ ॥

॥संस्कृतटीकाकारकृतमङ्गलाचरणम् ॥

नत्वा श्रीभारतीतीर्थविद्यारण्यमुनीश्वरौ।
ब्रह्मानंदाभिधं ग्रंथं व्याकुर्वे बोध सिद्धये ॥१ ॥

टीका:-श्रीभारतीतीर्थ औ विद्यारण्य इन दोनूंमुनीश्वरनकूं नमनकरिके बोधकीसिद्धि अर्थ मैं ब्रह्मानंदनामक ग्रंथकूं व्याख्यान करुहूं॥ १॥

५१)चिकीर्षितग्रंथस्य निष्प्रत्यूह परिपूरणाय परिपंथिकल्मषनिवृत्तये अभिमतदेवता तत्त्वानुसंधानलक्षणमंगलमाचरन् श्रोतृप्रवृत्तिसिद्धये सप्रयोजनमभिधेयमाविष्कुर्वन् ग्रंथारंभं प्रतिजानीते —

॥१ ॥श्रुतिकरि ब्रह्मज्ञानकूं अनर्थनिवृत्ति औ परमानंदप्राप्तिकी कारणताके कथन पूर्वक ब्रह्मकी आनंदता। अद्वितीयता औ स्वप्रकाशताकी सिद्धि॥ ४०५१-४२०८॥

॥१ ॥अनेकश्रुतिकरि ब्रह्मज्ञानकूं अनर्थनिवृत्ति औ परमानंदप्राप्तिकी हेतुताका कथन॥

[1] ब्रह्मानंदका प्रतिपादक ब्रह्मानंदनामक जो तीन वा पांचअध्यायरूप ग्रन्थ है।तिसके अंतर्गत जो चित्तकी एकाग्रतारूप योगकरि आविर्भूत कहिये प्रगट होनैंयोग्य आनंदका प्रतिपादक प्रकरण। सो योगानंद कहिये है॥

॥४०५१-४१९७ ॥

॥ १ ॥फलसहित ब्रह्मानंदग्रंथके आरंभकी प्रतिज्ञा॥

प्रारंभ करनैकूं इच्छित ब्रह्मानंदग्रंथकी निर्विघ्नपरिपूर्णताअर्थ औ विघ्नरूप पापनकी निवृत्तिअर्थ इष्टदेवताकेस्वरूपके अनुसंधानरूप मंगलकू आचरतेहुये आचार्य जो ग्रंथकर्ता श्रीभारतीतीर्थस्वामी सो ग्रंथविषै श्रोताकी प्रवृत्तिकी सिद्धिअर्थ प्रयोजनसहित ग्रंथके विषयकूं प्रगट करतेहुये ग्रंथके आरंभकी प्रतिज्ञा करै हैं॥५१॥

ब्रह्मानन्दं प्रवक्ष्यामि ज्ञाते तस्मिन्नशेषतः।

ऐहिकामुष्मिकानर्थव्रातं हित्वा सुखायते॥ १॥

५२]ब्रह्मानंदं प्रवक्ष्यामि। तस्मिन् ज्ञाते ऐहिकामुष्मिकानर्थव्रातं अशेषतः हित्वा सुखायते॥

ब्रह्मानंदकूं कथन करुंहुं।तिस ब्रह्मानंदके ज्ञात हुये यह पुरुष इसलोकसंबंधी और परलोकसंबंधी अनर्थनके समूहकूं त्यागिके सुखी होवै है॥५२॥

५३)निर्विशेषं परंब्रह्म साक्षात्कर्तुमनीश्वराः । ये मंदास्तेऽनुकंप्यंते सविशेषनिरूपणैः॥ (ब्र.सू.वेदान्तकल्पतरु १-१-२०;भगवद्गीता मधुसूदनीटीका १२-१३)**इति सविशेषब्रह्मरूपाणांदेवतानां तत्त्वस्य निर्विशेषब्रह्मरूपत्वाभिधानाद्ब्रह्मणश्च"आनंदो ब्रह्म"**(तै.२-६)**इत्यादिश्रुतिभिरानंदरूपताभिधानाद्ब्रह्मानंद इत्यानंदरूपस्यब्रह्मणो वाचकशब्दप्रयोगेण"यद्धिमनसा ध्यायति तद्वाचा वदति तत्कर्मणा करोति"**(तै.सं.६-१-७) **इति श्रुतिप्रोक्तन्यायेन ब्रह्मानुसंधानलक्षणं मंगलाचरणं सिद्धम्। ब्रह्मणश्च सर्ववेदांतप्रतिपाद्यत्वात् तत्प्रकरणरूपस्य अस्यग्रंथस्यापि तदेव विषय इति ब्रह्मशब्दप्रयोगेण विषयश्चापि सूचितः। ऐहिक इत्युत्तरार्धेन अनिष्टनिवृत्तीष्टप्राप्तिरूपं प्रयोजनद्वयं मुखत एवोक्तम्। ब्रह्मानन्दं ब्रह्म चासावानन्दश्चेति ब्रह्मानन्दः वाच्यवाचकयोरभेदोपचारात्तत्प्रतिपादको ग्रन्थोऽपि ब्रह्मानन्दस्तं प्रवक्ष्यामि इति। तस्मिन् प्रतिपाद्य प्रतिपादकरूपे ब्रह्मानन्दे ज्ञाते अवगते सति। ऐहकामुष्मिकानर्थव्रातं ऐहिकानां इहलोके भवानां देहपुत्रादिष्वहंममाभिमानप्रयुक्तानां आध्यात्मिकादितापानां आमुष्मिकानां अमुष्मिन् परलोके भवानां च तेषामनर्थानां व्रातः समूहः तं अशेषतः निः शेषं यथा भवति तथा हित्वा परित्यज्य सुखायते सुखरूपं ब्रह्मैव भवति॥१॥**

"निर्विशेष कहिये निरुपाधिक ऐसैं परब्रह्मकूं साक्षात् कहिये अपरोक्ष करनैकूं असमर्थ जे मंदबुद्धिवाले अधिकारी हैं। वे सविशेष जो सोपाधिकब्रह्म ताके निरूपणनकरि कृपाके विषय करिये हैं" इस शास्त्रके वचनकरि सविशेषब्रह्मरूप जे विष्णुआदिक देवता हैं। तिनका तत्त्व जो वास्तवस्वरूप ताकी निर्विशेषब्रह्मरूपताके कथनतैं✪ औ"आनंद ब्रह्म है"इत्यादि

ॐ

॥ अथ ब्रह्मानंदे [1]आत्मानंदः ॥ १२ ॥

॥द्वितीयोऽध्यायः॥ २ ॥

॥ भाषाकर्त्ताकृत मङ्गलाचरणम् ॥

श्रीमत्सर्वगुरून् नत्वा पञ्चदश्या नृभाषया।
आत्मानन्दाभिधग्रन्थव्याख्यानं क्रियते मया॥ १ ॥

टीका:-श्रीयुक्तसर्वगुरुनकूं नमस्कारकरिके पंचदशीके आत्मानंद नाम ग्रंथका तत्त्व-प्रकाशिकाऽख्या व्याख्यान नरभाषासैं मेरेकरि करिये है॥ १ ॥

॥ श्रीरामकृष्ण टीका॥

९२)अथ ब्रह्मानंदांतर्गतमात्मानंदनामकद्वितीयाध्यायमारभते।तदेवं प्रथमाध्याये विवेकिनो योगेन निजानंदानुभवप्रकारं प्रदर्श्य मूढस्य जिज्ञासोरात्मानंदशब्दवाच्यत्वं पदार्थ विवेचनमुखेन ब्रह्मानंदानुभवप्रकारप्रदर्शनाय शिष्यप्रश्नमवतारयति —

॥ १ ॥ आत्मानंदके अधिकारी औ आत्माके अर्थ सर्ववस्तुकी प्रियतापूर्वक आत्माकी त्रिविधता॥ ४५९२- ४८१८ ॥

॥ १ ॥ मंदबुद्धिवाले अधिकारीकूं आत्मानंदसैं बोधनकी योग्यता॥ ४५९२-४६१० ॥

॥ १ ॥ मूढकी गतिअर्थ शिष्यका प्रश्न॥

ऐसैं प्रथम योगानंदनामक अध्यायविषै विवेकीपुरुषकूं योगाभ्यासकरि निजानंदके अनुभवका प्रकार दिखायके। अब इस अध्यायविषै मंदबुद्धिवान् जो जिज्ञासु नाम स्वरूपानंदके जाननेकी इच्छावाला है।ताकूं आत्मानंदशब्दके वाच्य“त्वं”पदार्थके विवेचनरूप द्वारकरि ब्रह्मानंदके अनुभवका प्रकार दिखावनैकूं ग्रंथकार शिष्यके प्रश्नकूं प्रगट करते हैं॥९२ ॥

---

1 प्रत्यगात्माका स्वरूपभूत जो आनंद। सो आत्मानंद है। ताका प्रतिपादक जो प्रकरण सो बी आत्मानंद कहिये है॥

नन्वेवं वासनानंदाद्ब्रह्मानंदादपीतरम्।

वेत्तु योगी निजानन्दं मूढस्यात्रास्ति का गतिः॥१॥

९३]ननु एवं योगी वासनानंदात् ब्रह्मानंदात् अपि इतरं निजानंदं वेत्तु। अत्र मूढस्य का गतिःअस्ति॥ १॥

ननु। ऐसैं योगानंद प्रकरणउक्तप्रकारकरि योगीपुरुष वासनानंदतैं औ ब्रह्मानंदतैं बी अन्य जो निजानंद है। ताकूं अनुभव करहु। इहां मूढनकी कौन गति कहिये दशा है? सो कथन करहु॥ १॥

९४]शिष्येणैवं पृष्टो गुरुरतिमूढस्य विद्याधिकार एव नास्ति इत्याह (धर्मेति) —

॥ २॥ अतिमूढकूं विद्या(ज्ञान)के अधिकारका अभाव॥

ऐसैं शिष्यनैं पूछ्या तब गुरु।अतिमूढकूं ज्ञानका अधिकार नहीं है।ऐसैं कहै हैं॥९४

धर्माधर्मवशादेष जायतां म्रियतामपि।

पुनःपुनर्देहलक्षैः किं नो दाक्षिण्यतो वद॥ २॥

९५]एषःधर्माधर्मवशात् देहलक्षैःपुनःपुनःजायतां अपि म्रियतां नःदाक्षिण्यतःकिं वद।

यह। धर्मअधर्मके वशतैं फेरि फेरि देहनके लक्षनकरि जन्महू औ मरहू। इहां हमारे समुजावनैकरि क्या प्रयोजन है? सो कथन कर॥९५॥

९६)एषः अतिमूढोऽनादौ संसारेऽतीतेषु जन्मसु अनुष्ठितसुकृतदुष्कृत वशान्नानाविध देहस्वीकारेण पुनःपुनःजायतां म्रियतां चेत्यर्थः॥ २॥

यह अतिमूढ। अनादिसंसारमैं पूर्वलेजन्मनविषै अनुष्ठान किये पुण्य औ पापके वशतैं नानाप्रकारके देहनके अंगीकारकरि फेरि फेरि जन्महू औ मरहू। यह अर्थ है॥२॥

९७)सर्वानुग्राहकत्वादाचार्येण तस्यापि काचन गतिः वक्तव्येति शिष्य आह (अस्तीति) ॥ ३॥

॥३॥शिष्यकरि मूढअर्थ दयालुगुरुके प्रयोजनका कथन औ गुरुकरि मूढमैं दोविकल्प॥

सर्वका अनुग्रह[2]करनैंहारा होनैतैं आचार्य जो गुरु तिसकरि तिस मूढकी बी कोईक गति कहीचाहिये। ऐसैं शिष्य कहता है॥९७॥

अस्ति वोऽनुजिघृक्षुत्वाद्दाक्षिण्येन प्रयोजनम्।

तर्हिब्रूहि स मूढःकिं जिज्ञासुर्वा पराङ्मुखः॥ ३॥

---

2 **"बोधयन्ति बलादेव सानुकम्पा हि साधवः॥"**(यो.वा.नि.प्र.पूर्वार्धम् ६६-३)स्वभावतःदयाशील महात्मालोग अधिकारीजनोंको हठात् बोध दियाहीं करते हैं॥ औ देखो विवेकचूडामणिः३९, ४० श्लोक॥

ॐ

॥ अथ ब्रह्मानंदे अद्वैतानंदः ॥ १३ ॥

॥तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

॥ भाषाकर्त्ताकृत मङ्गलाचरणम् ॥

श्रीमत्सर्वगुरून् नत्वा पञ्चदश्या नृभाषया।
अद्वैतानन्दसंज्ञस्य व्याख्यानं क्रियते मया ॥१ ॥

॥ अथ श्रीब्रह्मानंदगत अद्वैतानंदकी तत्त्व[1] प्रकाशिका व्याख्या ॥ १३ ॥

टीका:-श्रीयुक्त सर्वगुरुनकूं नमस्कारकरिके। पंचदशीके अद्वैतानंदनामक प्रकरणका व्याख्यान नरभाषासैं मेरेकरि करिये है ॥ १ ॥

॥ श्रीरामकृष्ण टीका ॥

८४)ननु "आनंदस्त्रिविधो ब्रह्मानंदो विद्यासुखं तथा विषयानंदः" इति प्रथमाध्याये आनंदत्रयमेव प्रतिज्ञाय द्वितीयाध्याये तदतिरिक्तात्मानंदनिरूपणात् तद्विरोधो जायत इत्याशंक्याह (योगानंद इति) —

॥१ ॥ब्रह्मके विवर्त्त जगतकी ब्रह्मसैं अभिन्नतापूर्वक शक्ति औ ताके कार्यकी अनिर्वचनीयता ॥ ४९८४-५२४० ॥

॥ १ ॥आनंदरूप ब्रह्मके विवर्त्त जगतकी ब्रह्मसैं अभिन्नता ॥ ४९८४-५०४७ ॥

॥ १ ॥ त्रिविधआनंदकी प्रतिज्ञाके विरोधका निषेध औ आत्मानंदकी सद्वैतताकी शंका और उत्तर ॥

ननु "ब्रह्मानंद। विद्यानंद औ विषयानंद। इसभेदतैं आनंद तीनप्रकारका है" ऐसैं प्रथमअध्याय जो योगानंदनाम एकादशप्रकरणविषै तीन आनंदनकूंहीं प्रतिज्ञाकरिके। द्वितीय अध्यायविषै तिन प्रतिज्ञा किये तीनआनंदनतैं भिन्न आत्मानंदके निरूपणतैं तिस तीन आनंदन के कथनसैं विरोध होवै है। यह आशंकाकरि कहै हैं ॥८४ ॥

[1] अद्वैतरूप आनंदका प्रतिपादक प्रकरण ॥

योगानंदः पुरोक्तो यः स आत्मानंद इष्यताम्।
कथं ब्रह्मत्वमेतस्य सद्वयस्येति चेच्छृणु ॥१॥

८५]यःपुरा उक्तःयोगानंदःसःआत्मानंदःइष्यताम्॥

जो पूर्व एकादशप्रकरणविषै कथन किया योगानंद सोई आत्मानंद है। ऐसैं अंगीकार करना॥८५॥

८६)यथा प्रतिज्ञातस्यैव ब्रह्मानंदस्य योगजन्यसाक्षात्कारविषयत्वेन योगानंदत्वं निरुपाधिकत्वेन निजानंदत्वं च व्यवहृतं। तथा तस्यैव गौणमिथ्यामुख्यात्मविवेचनेनावगम्यत्वविवक्षयात्मानंदत्वमभिहितमिति भावः॥

जैसैं योगानंदनामक एकादशप्रकरणगत प्रथमश्लोकविषै प्रतिज्ञा किये ब्रह्मानंदकाही योगसैं जन्य साक्षात्कारका विषय होनैंकरि योगानंदपना व्यवहार किया है औ निरुपाधिक होनैकरि निजानंदपना व्यवहार किया है।तैसैं तिसी ब्रह्मानंदकाहीं गौण मिथ्या औ मुख्यात्मा के विवेचनसैं जाननैकी योग्यताके कहनैकी इच्छाकरि आत्मानंदपना कहा हैं। यह भाव है॥८६॥

८७)ननु सजातीयाद्गौणात्मनःपुत्रभार्यादेःमिथ्यात्मनो देहादेर्विजातीयाकाशादेश्च विभिन्नस्य सद्वयस्यात्मानंदस्य प्रथमाध्यायोक्ताद्वितीययोगानंदरूपता न संभवतीति शंकते (कथमिति) —

ननु। आत्मा होनैंकरि सजातीय कहिये साक्षीरूप मुख्याआत्माके समानजातिवाला जो पुत्रभार्याआदिकरूप गौणआत्मा औ अनात्मा होनैंकरि विजातीय कहिये विलक्षण जातिवाले आकाशआदिक।तिनतैंभिन्नद्वैतसहितआत्मानंदकूं योगानंदनामप्रथमअध्यायविषै उक्तअद्वितीय योगानंदरूपता नहीं संभवै है। इसरीतिसैं वादी शंका करै है॥

८८]सद्वयस्य एतस्य ब्रह्मत्वं कथं इति चेत्।

द्वैतसहित इस आत्मानंदकी ब्रह्मरूपता कैसैं बनै है? ऐसैं जो कहै॥८८॥

८९)सजातीयत्वेनाभिमतस्य गौणात्मनःपुत्रादेर्मिथ्यात्मनो देहादेश्च तैत्तिरीयश्रुत्यभिहित जगदंतः पातित्वादाकाशादेश्च जगत आत्मानंदातिरेकेणासत्वाच्च अद्वितीयब्रह्मरूपता तस्य घटत इति सबहुमानमुत्तरमाह —

सजातीय होनैंकरि माने जे पुत्रादिकगौणआत्मा औ देहादिकमिथ्याआत्मा। तिनकूं तैत्तिरीयश्रुतिविषै उक्त आकाशादिकजगतके अंतर्गत होनैतैं औ आकाशादिरूप जगतकूं आनंदतैं भिन्न असत् होनैतैं। तिस आत्मानंदकूं अद्वितीयब्रह्मरूपता घटै है। इसतिसैं सिद्धांती बहुमानसहित उत्तरकूं कहै हैं॥॥८९॥

ॐ

॥ अथ ब्रह्मानंदे [1]विद्यानंदः॥

॥चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

॥ भाषाकर्त्ताकृतमङ्गलाचरणम् ॥

श्रीमत्सर्वगुरून् नत्वा पञ्चदश्या नृभाषया।
विद्यानन्दस्य संकुर्वे व्याख्यां तत्त्वप्रकाशिकाम् ॥१ ॥

टीका:-श्रीयुक्त सर्वगुरुनकूं नमनकरिके श्रीपंचदशीके विद्यानंदनामप्रकरणकी तत्त्व-प्रकाशिकानामव्याख्याकूं नरभाषासैं मैं करूंहुं ॥ १ ॥

॥ श्रीरामकृष्ण टीका ॥

२०)इदानीं वृत्तवर्तिष्यमाणयोर्ग्रंथयोःसंबंधमाह —

॥ १ ॥ विद्यानंदकेस्वरूपपूर्वक तिसकरि निवर्त्त करनैयोग्य दुःखका विभाग ॥ ५४२०-५४५२

॥१ ॥ विद्यानंदका स्वरूप औ ताका अवांतरभेद ॥५४२०-५४२७ ॥

॥ १ ॥ पूर्व औ पीछेके ग्रंथका संबंध ॥

अब ११वें प्रकरणसैं गत औ १४ वें प्रकरणविषै कहनेके ग्रंथनके संबंधकूं कहै हैं ॥२०

योगेनात्मविवेकेन द्वैतमिथ्यात्वचिन्तया।
ब्रह्मानन्दं पश्यतोऽथ विद्यानन्दो निरूप्यते ॥१ ॥

२१]योगेन आत्मविवेकेन द्वैतमिथ्यात्वचिंतया ब्रह्मानंदं पश्यतः अथ विद्यानंदः निरूप्यते ॥ १ ॥

योगकरि औ आत्माके विवेककरि औ द्वैतके कहिये प्रपंचके मिथ्यापनैके चिंतनकरि ब्रह्मानंदकूं साक्षात् करनैहारे विद्वानकूं उदय होवै है जो विद्यानंद। सो अब इस १४ वें प्रकरणविषै निरूपण नाम प्रतिपादन करिये हैं॥ १ ॥

---

[1] विद्या जो तत्त्वज्ञान तासैं आविर्भावकूं पावनैहारे चतुर्विध आनन्दका प्रतिपादक प्रकरण ॥

ॐ

॥ अथ ब्रह्मानन्दे विषयानन्दः॥

॥ पञ्चमोऽध्यायः॥ ५ ॥

॥ भाषाकर्त्ताकृत मङ्गलाचरणम् ॥

श्रीमत्सर्वगुरून् नत्वा पञ्चदश्या नृभाषया।
विषयानन्दसंज्ञस्य व्याख्यानं क्रियते मया॥ १ ॥

॥ अथ श्रीब्रह्मानन्दगत विषयानन्दकी[1] तत्त्वप्रकाशिका व्याख्या॥ १५॥

टीका:–श्रीयुक्त सर्वगुरुनकूं नमस्कारकरिके श्रीपंचदशीके विषयानंदनामप्रकरणका व्याख्यान नरभाषासैं मेरेकरि करिये है॥ १ ॥

६४)पञ्चमाध्यायस्य प्रतिपाद्यमर्थमाह —

॥ १ ॥ सप्रपञ्चब्रह्मके स्वरूपका कथन ॥ ५५६४-५६२७ ॥

॥१ ॥ विषयानंदके निरूपणकी योग्यतापूर्वक ताकी उपाधिभूत वृत्तिनका विभाग॥ ५५६४-५५७७ ॥

॥ १ ॥ ब्रह्मानंदका अंश औ ताके ज्ञानके द्वारा विषयानंदके निरूपणकी प्रतिज्ञा औ ताकूं ब्रह्मानंदके अंश होनेमैं श्रुतिप्रमाण॥

पंचमअध्याय जो विषयानंदनामप्रकरण ताके प्रतिपादन करनेयोग्य अर्थ कहैहैं॥६४॥

अथात्र विषयानंदो ब्रह्मानंदांशरूपभाक्।
निरुप्यते द्वारभूतस्तदंशत्वं श्रुतिर्जगौ॥१ ॥

६५]अथ अत्र ब्रह्मानंदांशरूपभाक् विषयानंदः निरूप्यते॥

अब इस १५ वें प्रकरणविषै ब्रह्मानंदका अंशरूप विषयानंद निरूपण करिये है ॥६५॥

६६]ननु विषयानन्दस्य लौकिकत्वात् मोक्षशास्त्रे निरूपणमनुपपन्नमित्याशंक्य तस्य लौकिकप्रसिद्धत्वेऽपि तस्य ब्रह्मानन्दैकदेशत्वेन ब्रह्मज्ञानोपयोगित्वात् युक्तमित्याह —

---

[1] विषयलाभादिनिमित्त अंतर्मुख भई वृत्तिनविषै जो बिंबरूप ब्रह्मानंदका प्रतिबिंब होते है। सो विषयानंद कहिये है। ताहीकूं लेशानंद औ ब्रह्मानंदका अंश बी कहे है। तिसका प्रधानताकरि प्रतिपादक जो प्रकरण सो विषयानंद कहिये है॥

अथ षड् दर्शनसारदर्शकपत्रकं

विषय	पूर्वमीमांसा	उत्तर मीमांसा (वेदान्त)	न्याय	वैशेषिक	सांख्य	योग
जगत्	स्वरूपसैं अनादि अनंत प्रवाहरूप संयोगवियोगवान्	नामरूप क्रियात्मक मायाका परिणाम चेतनका विवर्त्त	परमाणुआरंभित संयोग वियोगजन्य आकृति विशेष	परमाणुआरंभित संयोग वियोगजन्य आकृति विशेष	प्रकृतिपरिणाम त्रयोविंशतितत्त्वात्मक	प्रकृतिपरिणाम त्रयोविंशतितत्त्वात्मक
जगत्कारण	जीव अदृष्ट औ परमाणु	अभिन्ननिमित्तोपादान ईश्वर	परमाणु ईश्वरादि नव	परमाणु ईश्वरादि नव	त्रिगुणात्मक प्रकृति	कर्मानुसार प्रकृति औ तन्नियामक ईश्वर
ईश्वर	0	मायाविशिष्ट चेतन	नित्यइच्छाज्ञानादिगुणवान् विभु कर्त्ताविशेष	नित्यइच्छाज्ञानादिगुणवान् विभु कर्त्ताविशेष	0	क्लेशकर्मविपाक आशय असंबद्धपुरुषविशेष
जीव	जडचेतनात्मक विभु नाना कर्ता भोक्ता	अविद्याविशिष्ट चेतन	ज्ञानादि चतुर्दशगुणवान् कर्त्ता भोक्ता जड विभु नाना	ज्ञानादि चतुर्दशगुणवान् कर्त्ता भोक्ता जड विभु नाना	असंग चेतन विभु नाना भोक्ता	असंग चेतन विभु नाना कर्त्ता भोक्ता
बन्धहेतु	निषिद्धकर्म	अविद्या	अज्ञान	अज्ञान	अविवेक	अविवेक
बन्ध	नरकादिदुःखसंबंध	अविद्या तत्कार्य	एकविंशतिदुःख	एकविंशतिदुःख	अध्यात्मादि त्रिविधदुःख	प्रकृतिपुरुषसंयोगजन्य अविद्यादिपंचक्लेश
मोक्ष	स्वर्गप्राप्ति	अविद्यातत्कार्यनिवृत्ति पूर्वक परमानन्दब्रह्मप्राप्ति	एकविंशतिदुःखध्वंस	एकविंशतिदुःखध्वंस	त्रिविधदुःखध्वंस	प्रकृतिपुरुषसंयोगाभाव पूर्वक अविद्यादि पंचक्लेशनिवृत्ति
मोक्षसाधन	वेदविहितकर्म	ब्रह्मात्मैक्यज्ञान	इतरभिन्नात्मज्ञान	इतरभिन्नात्मज्ञान	प्रकृतिपुरुषविवेक	निर्विकल्पसमाधिपूर्वक विवेक

श्रीमद्भागवताष्टमस्कन्धगत

श्रीगजेन्द्रमोक्ष

श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ सद्गुरु श्रीपण्डित पीताम्बरजीकृत

॥ अथ श्रीमद्भागवताष्टमस्कंध द्वितीयोऽध्यायः॥ २ ॥

॥ श्रीशुक उवाच ॥

॥ अनुष्टुप् छंदः ॥

आसीद् गिरिवरो राजंस्त्रिकूट इति विश्रुतः।
क्षीरोदेनावृतःश्रीमान् योजनायुतमुच्छ्रितः॥१ ॥

॥२ ॥ त्रिकूटाचलवर्णन ॥

॥ श्रीशुकदेवजी कहतेभये ॥

हे राजन्! क्षीरसागरकरि आवृत शोभावान् दशसहस्रयोजन उच्च त्रिकूट ऐसा विख्यात श्रेष्ठपर्वत है॥ १॥

तावता विस्तृतःपर्यक् त्रिभिःशृंगैःपयोनिधिम्
दिशःखं रोचयन्नास्ते रौप्यायसहिरण्मयैः॥ २ ॥

तितनै दशसहस्रयोजनोंकरि च्यारिऔरतैं विस्तृत औ रौप्य लोह अरु सुवर्णमय तीन मुख्यशिखरोंकरि क्षीरसागरकूं दशदिशाओंकूं औ आकाशकूं शोभायुक्त करताहुया है॥२ ॥

अन्यैश्च ककुभःसर्वा रत्नधातुविचित्रितैः।
नानाद्रुमलतागुल्मैर्निर्घोषैर्निर्झरांभसाम् ॥३ ॥

रत्न अरु धातुनकरिविचित्र औ नानाप्रकारके वृक्ष वेली अरु गुल्म जिनोंविषै है। ऐसैं अन्यशिखरोंकरि औ निर्झररूपजलोंके निर्घोषनकरि सर्वदिशाओंकूं शोभायुक्त करता-हुया है॥ ३॥ औ

स चावनिज्यमानांघ्रिःसमंतात् पयऊर्मिभिः।